बगरू की हस्त ठप्पा छपाई कला

Dec.-09—Jan.-2010

* डॉ. मदनसिंह राठौड़ ** महेश सिंह

*एसोसिएट प्रोफेसर, दृश्यकला विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर
**सीनियर असिस्टेन्ट प्रोफेसर, ललित कला विभाग, इन्टरनेशनल कॉलेज फॉर गर्ल्स, मानसरोवर, जयपुर

राजस्थान राज्य में साँगानेर व बगरू के अतिरिक्त भी अन्य हस्त द्वारा ठप्पा छपाई के प्रमुख केंन्द्र है जहाँ पर आज भी अनेक प्रकार विधि द्वारा ठप्पा छपाई का कार्य बड़ी कुशलतापूर्वक किया जाता था और वर्तमान समय में भी किया जा रहा है। जिनमें मुख्य रूप से जयपुर, उदयपुर, पाली, अलवर, कालाडेरा, जोधपुर, बाडमेर, बीकानेर एवं शेखावाटी क्षेत्र के अनेक ग्राम इत्यादि इस कार्य में व्यस्त है राजस्थान में छपाई कला का सर्वोत्कृट और सर्वाधिक निखरा रूप बगरू के छपें वस्त्रों में देखने को मिलता है। बगरू की अद्विितीय छपाई के कार्य का वर्तमान समय में भी बड़ा गौरवपूर्ण नाम है। बगरू की इस छपाई कला कार्य का विस्तारपूर्वक वर्णन इस शोध पत्र में कर रहा हूँ।

हस्त द्वारा ठप्पा छपाई कला जो कि सदियों से भारतवर्ष के विभिन्न प्रान्तों एवं क्षेत्रों में होती आ रही है और यह बहुमूल्य परम्परा आज पर्यन्त एक जीवन्त कला कार्य के रूप में हो रही है। जिसका एक प्रमुख क्षेत्र भारतवर्ष का उत्तर–पश्चिमी प्रान्त राजस्थान भी शामिल है। राजस्थान का नाम सामने आते ही भारत की सभ्यता, संस्कृति, इतिहास और ज्ञान चिन्तन की रूप रेखा सम्मुख उपस्थित हो जाती है और ऐसा प्रतीत है कि जैसे एक समय ऐसा था जब शौर्य, नीति, धर्म, कला, विवेक, मर्यादा, संस्कृति, स्थापत्य कला इत्यादि का केन्द्र यही राजपूताना रहा हो। राजपूती शासकों के नामकरणानुसार इस प्रान्त का आरम्भिक नाम राजपुताना था किन्तु समय के परिवर्तन के साथ–साथ इसका नाम भी राजपूताना से राजस्थान हुआ।

राजस्थान में अनेक लोक–कलाओं, संस्कृति, इतिहास, शासकों आदि का उत्थान व पतन हुआ किन्तु इन्ही राजपूती शासकों के शासन काल में राजपूती शासकों ने इस हस्त द्वारा ठप्पा छपाई कला को अपने क्षैत्रिय धर्म तथा कर्म की परम्परा से विमुख हट कर इस हस्त द्वारा ठप्पा छपाई कला को प्रारम्भ करवाया और पनपाया। जन साधारण ने भी धीरे–धीरे इस कला में रूची ली और अत्यन्त लगाव से इसको अपनाया। धीरे–धीरे राजपूती शासकों ने ही सम्पूर्ण राज्य में निर्मित एवं छपाई, रंगाई किये गए वस्त्रों की प्रदर्शनी लगवाई। तत्पश्चात समय के बदलावानुसार सभी राजपूती शासकों ने इस कला में रूचि दिखलाई और यह कला वंशानुगत परम्परा का अभिन्न अंग बन गई व इसका चौमुखी विकास होता गया। इस कला को राजकीय संरक्षण प्राप्त होता गया व रचनाकारों, कलाकारों, रंगरेजों आदि को दरबारी आश्रम प्राप्त हुआ इस कारण भी यह हस्त कला अधिक फली – फूली और अपने विशिष्ट चरमोत्कर्ष तक पहुँची।

बगरू–पूर्व समय में बगरू छापा ज्यादातर वहाँ की

स्थानीय जनता द्वारा काम में लिया जाता था, खासकर स्त्रियों द्वारा। बगरू में स्थानीय तरीकों (विधी) द्वारा लाल (Alizarine Red) काला (Iron Black), सुनहरी पीला (Bright Yellow), नीला (Indigo Blue) जैसे चटकीले रंगों में खद्दर सूती कपड़ों पर हस्त छापों द्वारा विभिन्न भांतों (मुख्य भाव) की छपाई की जाती थी।

भांत (मुख्य भाव) बनाने में फूल, फूलकारी, पशु, पक्षी, मानवाकृति, आदि के साथ–साथ ज्यामितिय आकार भी काम में लिए जाते है। ये सब कुछ स्थानीय उद्गम (मूल) स्थान से प्रभावित है। यहाँ सदियों के पश्चात भी धुलाई, 'रजिस्ट छपाई' रंगीन छपाई और कपड़े की रंगाई की वहीं मूल विधि प्रयोग में लायी जाती है। कुछ प्राकृतिक रंगों की जगह रासायनिक रंग आ गये है किन्तु 'रजिस्ट' और उनका प्रयोग, छपाई के तरीकों और उनके अनुक्रम में कुछ खास बदलाव नहीं आया है। मुख्यभाव और अलंकरण कुछ हद तक बाजार की माँग के अनुसार बदल दिये गये है। यहाँ पर मुख्य रूप से बारीक, कोमल वक्राकार, घुमावदार रेखाएँ आदि अत्यधिक प्रयोग में ली गई है।

बगरू राजस्थान राज्य का एक छोटा सा गाँव है। जो कि जयपुर से लगभग 23 किलोमीटर दूर पश्चिम दिशा की ओर स्थित है। यहाँ के विशुद्ध रंगों द्वारा परम्परागत हस्त द्वारा ठप्पा सदियों से जानी पहचानी जाती है। विदेशों में इस परम्परागत हस्त द्वारा ठप्पा छपाई कला का लुभाव होने से यह गाँव अधिकतर समय वस्त्रों की छपाई के लिए व्यस्त रहता है और सुन्दर रंगीन छपें वस्त्रों का निर्यात करता है। परिस्थितियों के विपरीत यह माना जाता है। कि यह हस्त द्वारा ठप्पा छपाई कला सदियों से चली आ रही है। जिसे पहले 'जयपुर छापा' के नाम से भी जानी जाती थी।

हाथ द्वारा छपाई करने वाले कारीगर जो 'छीपा' के नाम से जाने जाते है, वो यहाँ राजस्थान के सवाईमाधोपुर, जयपुर, झुंझनु और सीकर आदि जिलों से छीपाओं के कई परिवार बगरू मुखिया या ठाकुर द्वारा लाकर यहाँ बसाए गए। बगरू के मुखिया जयपुर रियासत के प्रथम सुप्रतिष्ठित और महाराजा का बांया हाथ अर्थात् महाराजा के पश्चात प्रथम पद धारण करने वाले थे। दरबार में महाराजा की अनुपस्थिति में, व्यवहारिक रूप से महलों और शहर का दायित्व और महल के पैतृक अधिकारों का उपयोग वे महाराजा की भाँति कर सकते थे। उन्हें खानदानी उपाधि 'अधिराज' से भी सम्मानित किया गया था। इस प्रकार बगरू 'मुखिया' का इस छपाई कला के विकास में योगदान माना जाता है। साँजरिया नदी का जल बगरू को चारों ओर से घेरा हुआ था। जो कालान्तर में 'बगरू दीप' के नाम से जाना जाता था। जहाँ आज बगरू मौलिक रूप से बसा हुआ है और यह गाँव यहाँ छपी 'छींट' के लिए प्रसिद्ध है। छींट का वस्त्र सम्पूर्ण राजस्थान की महिलाओं द्वारा 'घघरा' के रूप में पहना जाता है।

कपड़े की धुलाई, रंगाई और छपाई के लिए प्रयोजनीय बहते जल के साथ–साथ विस्तारपूर्वक धूप का बिस्तर अति आवश्यक है। इसलिए यहाँ साँजरिया नदी की कभी ना रूकने

वाली जल– धारा और किनारों पर विस्तीर्ण बालू का बिछौना प्रयोजन के लिए एकदम सही था। साँजरिया नदी जो कि बगरू गाँव से पाँच किलोमीटर दूर पश्चिम में बहती है, यही नदी कालान्तर में गाँव को जल प्रदान करती थी। आजकल वर्षा काल के अतिरिक्त साँजरिया नदी वर्ष भर मुख्य जल धारा की भांति नहीं बहती। वर्ष के कुछ महिने बहुत कम बहती है और कुछ महिने शुष्क रहती है। उस समय मोती की तरह सफेद मनोहर चमकीला बालू का विस्तारपूर्ण फैलाव रहता है। छीपाओं के निवास स्थान से लगभग एक किलोमीटर की दूरी पर अब नदी का किनारा रह गया है। उन पुराने दिनों में नदी का जल पुथ्वी तल के नीचे के मार्ग द्वारा ले जाया जाता था और छोटे–छोटे बाँध या अवरोधक बना कर बाद की रंगाई, धुलाई के लिए एकत्रित करते थे। बगरू के छीपाओं को साँजरिया नदी ने बालू का विस्तीर्ण बिछौना और बहता हुआ पारदर्शी जल प्रदान किया। ये दो ही चीजें, 'जल' और 'बालू का बिछौना' पुराने दिनों का स्मरण करवाता है। वर्तमान समय में साँजरिया नदी के बचे हुए भाग की जल धारा व बालू के बिस्तार में कुछ छीपा (छापाकर) धुलाई, रंगाई और तपाई इत्यादि की प्रक्रिया करते हुए दिखलाई पड़ते है।

यद्यपि साँजारिया नदी के उद्‌गम स्थान में कुओं द्वारा भूमि से जल निकालने की जर्राही क्रिया ने विशेषकर साँजरिया नदी के महत्व या लाभ से और हाथ द्वारा छपाई कला के पारम्परिक प्रभाव (तेज) से वंचित कर दिया है। साँजरिया नदी के प्राकृतिक पुरात्तन गुणों को अधिकार में रख लिया है। छीपाओं ने नदी के मुहाने (किनारों) की चिकनी उपजाऊ मिट्‌टी के फैलाव को भली प्रकार उद्देश्य की पूर्ति के लिए समान रूप से बांट लिया है। बगरू में निर्मित नमूने और पारम्परिक मुख्य भाव (मोटिव) में किस प्रकार परिवर्तन हुआ यह उन्हें देखकर ही अनुमान किया जा सकता है। छीपाओं की सम्पूर्ण आबादी छपाई, रंगाई, धुलाई के कार्य में लगी हुई थी। छपें हुए वस्त्रों की स्थानीय विभिन्नता में मुख्यतः फड़द, लुगड़ी (ओढ़नी) अगोंछा, रजाई इत्यादि है। किन्तु वर्तमान में मिलावटपूर्ण छपाई आजकल के चलन के वस्त्रों में होने लगी है। परन्तु वर्तमान समय में मौलिक विधि और कुछ रंग अकृत्रिम व परिवर्तन होने से बचे हुए है।

कई सदियों से हो रही बगरू छपाई एक चमत्कारपूर्ण व विशेष (अलगाने वाली) और निजी अविभाज्य व एक उच्चतम कला कार्य (कौशल) है। यद्यपि, अन्य छपाई के केन्द्रों पर बगरू की मौलिक विधि का अनुकरण करने पर भी वैसा कलाकार्य और कहीं नहीं मिलता। अभी भी बगरू छपाई अधिकार में रखती है विशेष चित्ताकर्षक शक्ति जो बाकि के अन्य छपाई के केन्द्रों में किंचित् मात्रा में वैसा अभिप्रायः नहीं है और यह श्रेष्ट गुण या विशेषण बगरू के 'साँजरिया नदी जल' में है। यहाँ के कारीगर ठप्पा तैयार करने के लिए ज्यादा आज्ञा (आर्डर) नहीं पाते है। पीथापुर (गुजरात) के तैयार ठप्पों में कारीगरी की विशेषता को सबसे सर्वोत्तम निरूपण किया जाता है। और सविस्तार गहनता से खुदाई की जाती है।विभिन्न 'बूटा', बूटी तथा बेल (लता) के नाम छीपाओं ने इनके आकार और उनमें प्रयुक्त फल–फूलों के नाम के आधार पर रख दिये थे जो बहुत ही सटीक और रोचक है। कुछ 'बूटा', 'बूटियों' के नाम निम्नलिखित है :– (ये नाम बगरू के एक वृद्ध छीपा से प्राप्त हुए, अधिकतर नाम नयी पीढ़ी में प्रचलित नहीं है)

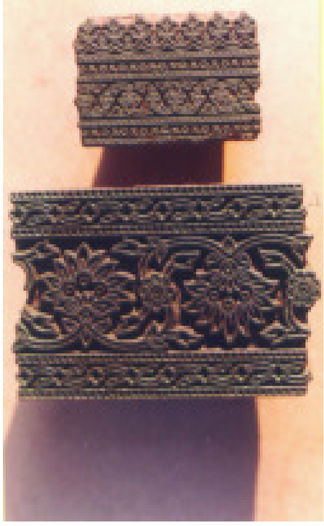

सिंह बाल बूटी :– पराग युत्त फूलों का झुकाव इस प्रकार होता है कि वे सिंह के मुख के बालों के समान प्रतीत होते है।

इलायची बूटी :– इलायची के आकार की छोटी–छोटी बूटियाँ होती है।

बिच्छु बूटी :– इस बूटी में फूल–पत्तियों के संयोजन में एक डाल बिच्छु के डंक के समान उपर उठी रहती है।

लटकन बूटी :– इसमें खजूर के वृक्ष के समान लटकती शाखाएँ बनी रहती है।

मोरड़ी बूटी :– इसमें पंख फैलाय हुए मोर बना रहता है।

हाथी बूटी :– इसमें हाथी की आकृति संयोजित रहती है।

बेलपत्र की बेल :– घुमावदार बेल में बेलपत्र के समान तीन पत्तियां बनी रहती है।

नीमपत्ती की बेल :– नीम के समान कटावदार पत्तियों की लहरदार बेल होती है।

अंगुर की बेल :– इसमें अंगुर के गुच्छे बने रहते है।

मगर बूटा : इसमें मगरमच्छ की आकृति अलंकृत रहती है।

मछल बूटी : मगर की भाँति मछली की आकृति संयोजित रहती है।

ढ़ोलामारू बूटी :– ऊट पर बैठे हुए स्त्री पुरूष की आकृति संयोजित रहती हैं।

सैनिक बूटी :– इसमें भी ऊंट पर बैठे हुए शस्त्रधारी पुरूष की आकृति को संयोजित किया जाता हैं।

इन समस्त 'बूटा, बूटियों' के अतिरिक्त चौफूली बेल, कमल फूल की बेल, बेलपत्र का कँगूरा, कली का कँगूरा, लहरिया आदि प्रकार के अलंकरण साँगानेरी व बगरू छीटों में अलंकृत व संयोजित होते थे। जिनके नाम यहाँ के युवा छीपा प्रायः भूल चुके है। बूटे–बूटियों की उपर्युक्त भांतो के अतिरिक्त वस्त्रों की सम्पूर्ण जमीन पर विभिन्न प्रकार के जाल, लहरिया, और बेल (लता) का भराव भी होता था। महिन भांत में घने भराव के लिए ठप्पे में बूटियों की संख्या अधिक रहती है। कुछ–कुछ बूटें–बूटियाँ अधिक पुराने नहीं है, लगभग 50 वर्षों से इनका प्रयोग होने लगा है। विशेश रूप से परदों, चादरों, टेबलक्लॉथ आदि में इनकी अधिकतर छपाई की जाती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. रंगे एवं छपे वस्त्र (उत्तर भारतीय रंगाई एवं छपाई कला का एक अध्ययन) डॉ. देवकी अहिवासी प्रथम संस्करण–1976 पृ, 3,4,25,26,27 2 कला किरण (त्रमासिक कला पत्रिका) संपादक– अरूण शेखावत, अगस्त, 1997 पृ,7 3. राजस्थान सुजस (द्वैमासिक पत्रिका) प्रधान संपादक– आशुतोष गुप्त, संपादक– डॉ. अमर सिंह राठौड, सूचना एवं जनसम्पर्क निदेशालय सचिवालय परिसर, जयपुर– 302005 अक्टूबर, नवम्बर, 1997 पृं 9,11 4. ''वस्त्र विज्ञान का महत्व तथा गृह विज्ञान से सम्बन्ध'' डॉ. प्रमिला वर्मा पृ, 126 5. ''रंगों द्वारा परिसज्जा'' वस्त्र विज्ञान एवं परिधान (सप्तम संस्करण) डॉ. प्रमिला वर्मा, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पृ, 187 6. वस्त्र उद्योग : तन्तु से वस्त्र, एम. डेविड पोटर, बर्नार्ड पी. कोर्बमैन हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़ पृ, 265 7. Study of contemporary Textile crafts of India, Block printing and Dyeing of Bagru, Rajasthan,B.C. Mohanty, J.P. Mohanty, Published by H.N. Patel On behalf of Calico Museum of Textile, Ahmedabad 380004 ,P-57 8.Textile and Costume, Dr. Chandramani Singh, Published by Man Singh (II) Sawai Man Singh, Museum Jaipur, 1979, P-63